प्रस्तावना
30वाँ संस्करण, 2006

भारतीय दण्ड संहिता वर्ष 1860 में अधिनियमित हुआ था। भयंकर सामाजिक एवं राजनीतिक महापरिवर्तन के मध्य में यह लॉर्ड मैकाले को एक श्रद्धांजलिस्वरूप है, जिन्होंने प्रथम भारतीय विधि आयोग के अध्यक्ष के रूप में सन् 1834 में कहा था। ''हमारा सिद्धान्त केवल यह है—एकरूपता जब तुम इसे प्राप्त कर सकते हो; अनेकता जब तुम्हें इसे अवश्य प्राप्त करना चाहिये? परन्तु सभी मामलों में निश्चितता।'' निश्चितता के विषय में भारतीय दण्ड संहिता एक आदर्श नमूना है। परिनियम (Statute) पुस्तिका पर इसके अस्तित्व के 143 वर्षों के दौरान, इसमें बहुत ही कम संख्या में संशोधन हुये हैं। वास्तव में, बहुत कम ही ऐसा निर्णय दिखायी देता है जो दण्ड संहिता में द्वयर्थक (ambiguous) भाषा या अन्य कारणवश किसी अभाव को भरने की आवश्यकता पर बल देता हो।

परन्तु फिर, वहां समान महत्व के इतिहास का तथ्य भी विद्यमान है, अर्थात्: रतनलाल एवं धीरजलाल द्वारा दण्ड संहिता की व्याख्या। प्रस्तुत रूपान्तर, चिर–प्रचलित (time-honored) पुस्तक का **तीसवाँ संस्करण है**। इस पुस्तक ने 1896 में अपने प्रथम संस्करण के प्रकाशन के पश्चात् से एक शताब्दी से भी अधिक की गौरवपूर्ण अवधि को पूरा कर लिया है। इस प्रकाशन को इतनी जबरदस्त प्रतिक्रिया मिली है कि तब से इसके 29 संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं एवं अनेकों बार पुनर्मुद्रण (reprint) हो चुका है। यह पुस्तक सभी न्यायालयों, प्रत्येक विधि विद्यालय के पुस्तकालयों को सुशोभित करती है एवं उन न्यायाधीशों एवं अधिवक्ताओं के पुस्तकालयों को भी, जो आपराधिक मामलों से संव्यवहार (deal) करते हैं, विधि के विद्वानों ने इस पुस्तक की सदैव से अत्यंत प्रशंसा की है। किसी भारतीय विधि पर यह एकमात्र टीका (commentary) है जो न केवल एक शताब्दी पुरानी है बल्कि साथ ही यह विधि विद्यालयों, पुलिस प्रशिक्षण संस्थाओं एवं न्यायालयों में पारिवारिक नाम बनी रहती आयी है। यह पुस्तक समय की ''एसिड परीक्षा'' पर खरी उतरी है – ''एसिड'', क्योंकि प्राध्यापकों, अधिवक्ताओं एवं न्यायाधीशों को प्रसन्न करना कोई सरल कार्य नहीं है। इसका प्राथमिक श्रेय निश्चय ही दोनों प्रसिद्ध टीकाकारों–श्री रतनलाल एवं धीरजलाल को जाना चाहिये। विभिन्न विधियों पर उनकी व्याख्याओं या टीकाओं ने सिद्धांत एवं व्यवहार के अनोखे विलयन (amalgam) को स्थापित किया है। इस व्याख्या की निरंतर सफलता का श्रेय क्रमिक (successive) सम्पादकों को भी मिलना चाहिये जिन्होंने इस पुस्तक पर अपनी विद्वत्ता को न्यौछावर कर दिया है।

(क्रमशः)

प्रस्तावना
30वाँ संस्करण, 2006 (क्रमशः)

किसी व्यापक सामाजिक उपयोगिता की पुस्तक को अद्यतन (up-to-date) बनाने के लिए, जैसे कि ये पुस्तक है, अनेकों निर्णयों का सर्वेक्षण करने एवं आलोचक के रूप में विश्लेषण करने तथा उनके अनुपात को प्रकट करने, विशेषतया जहाँ उनमें से कुछ स्पष्ट रूप से परस्पर विरोधी थे, की आवश्यकता थी। अगला कठिन कार्य था विभिन्न धाराओं के अर्थ एवं अन्तर्वस्तु को सुस्पष्ट, सरल एवं सारगर्भित (pithy) शब्दों में प्रस्तुत करना। विधि की भाषा के विषय में लिखते समय सरल या सहज होना अत्यन्त कठिन है।

प्रस्तुत पुस्तक ने एक शताब्दी से भी अधिक समय से समाज की बहुत सेवा की है। पुस्तक की अद्वितीय विशेषतायें, जो इसकी सफलता की जिम्मेवार हैं, उन पर पूर्व संस्करण की प्रस्तावना में प्रकाश डाला गया है। दण्ड संहिता, विधिक प्रक्रिया के द्वारा हमारी कुछ बड़ी सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने के चुनौती भरे कार्य का बीड़ा उठाने में जरा भी नहीं हिचकिचाती है। यद्यपि विधि के द्वारा सामाजिक सुधार की अपनी ही सीमायें हैं, फिर भी दण्ड संहिता "सती" एवं दहेज प्रथा जैसी बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकने में सफल रही है। विधायिका काफी लम्बे समय तक इस विश्वास पर चुप्पी साधे रही कि शिक्षा प्रसार एवं मीडिया के व्यापक संचारण के द्वारा फैले ज्ञान से यह प्रथायें सहजतः ही समाप्त हो जायेंगी। परन्तु सामाजिक बीमारी इतनी अधिक फैली थी और इसकी जड़ें इतनी गहरी थीं कि अपने–आप समाप्त होने के बजाय दहेज के खतरे ने अपने स्पर्शक (tentacles) और फैला दिया एवं दहेज सम्बंधी हत्याओं एवं आत्महत्याओं की बुराई को जन्म दिया। ऐसी अमानवीय सामाजिक प्रथाओं पर विजय प्राप्त करने के लिए संहिता में नये प्रावधान सम्मिलित किये गये थे। दुर्भाग्यवश, ऐसे मामले न्यायालय में लाये ही नहीं जाते हैं और उनमें से अधिकांश विश्वसनीय साक्ष्यों के अभाव में दोषमुक्त हो जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में अपराध का अध्ययन, विधिक प्रावधानों की नीरस एवं सुस्त तरीके से व्याख्या करके नहीं किया गया है, बल्कि समकालीन प्रासंगिकता (relevance) के सामाजिक दृश्य के रूप में किया गया है। यही कारण है कि यह पुस्तक नौसिखिया एवं प्राध्यापक, पीठासीन अधिकारी, एवं किसी व्यवसायी, अन्वेषणकर्ता एवं एक प्रशासक, प्रारूपकार, (draftsman) और विधायक इन सभी के मस्तिष्क को प्रभावित करती है।

इस पुस्तक को एक पूर्ण निर्देश–संहिता (complete code of reference) बनाने के लिए इसमें उच्चतम न्यायालय के लगभग सभी निर्णयों एवं उच्च न्यायालयों के महत्वपूर्ण निर्णयों को सम्मिलित किया गया है।

(क्रमशः)

प्रस्तावना
30वाँ संस्करण, 2006 (क्रमशः)

दण्ड संहिता के कुछ भागों को निकाल दिया गया था एवं उन्हें पृथक् अधिनियमों के रूप में पुनःअधिनियमित किया गया था। इसका एक उदाहरण भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 है। अन्य कई आपराधिक परिनियमों (statutes) का जन्म हुआ है, जो दण्ड संहिता के प्रावधानों का अतिक्रमण (impinge upon) करते हैं या उनके द्वारा प्रभावित होते हैं। इस संस्करण की अतिरिक्त विशेषताओं में से एक विशेषता ऐसे समवर्गी (allied) अधिनियमों का मनन भी है।

हम अनेकों उन विद्वानों के प्रति कृतज्ञ हैं, जिन्होंने इस संस्करण को तैयार करने में मुक्तहस्त सहायता की है। हम मेसर्स वाधवा एंड कम्पनी के संपादकीय स्टॉफ की सहायता से भी लाभान्वित हुये हैं। इस पुस्तक को उपयोगी बनाने में उनके प्रोत्साहन हेतु हम उनके आभारी हैं।

मुम्बई

वाई. वी. चन्द्रचूड़
मुख्य सम्पादक